मानव व्यवहार दर्शन

अध्याय 1

सत्ता – नित्य(विद्यमान), सत्य(भासमान), शुद्ध(सुखप्रद), बुद्ध(बोधगम्य), परमात्मा, व्यापक

अस्तित्व = सत्ता (अखण्ड) मे संपृक्त प्रकृति (अनंत इकाइयाँ)

सह–अस्तित्व मे सत्ता जागृत मानव मे, से, के लिए अनुभव काल मे आनंद के रूप मे, विचार काल मे समाधान के रूप मे, आचरण काल मे न्याय के रूप मे, कार्य–व्यवहार काल मे नियम के रूप मे प्राप्त है।

मानवीयतापूर्ण व्यवहार= न्याय= (6 स्वभाव + 3 दृष्टियाँ + 3 एषणात्मक प्रवृत्ति) युक्त व्यवहार

ज्ञान = आनंद, ईश्वर(सर्वत्र एक सा विद्यमान), लोकेश(लोक का आधार), व्यापक(सर्वत्र), चेतना (चैतन्य), परमात्मा(आत्मा से सूक्ष्म), निरपेक्ष उर्जा(इकाई की सक्रियता), पूर्ण(अपरिणामिता)

सह–अस्तित्व मे अनुभव ही ज्ञान का उद्‌घाटन; इस हेतु अध्ययन; ज्ञान ही विवेक, विज्ञान रूप मे प्रमाण

अनुभवपूर्वक अभिव्यक्ति ही ज्ञान; ज्ञान ही जागृत मानव मे समस्त क्रियाओ का आधार और प्रेरणा स्रोत

अध्याय 2

कृतज्ञता– उन्नति और जागृति के लिए प्राप्त प्रेरणा और सहायता की स्वीकृति

कृतज्ञता से गौरव, गौरव से सरलता, सरलता से सहजता, सहजता से मानवीयता, मानवीयता से सह–अस्तित्व, सह–अस्तित्व से कृतज्ञता सिद्ध

अध्याय 3

सृष्टि दर्शन– सृजन, विसर्जन, पोषण, शोषण

ऊर्जा– सापेक्ष (परस्परता मे प्रकट– दबाव, तरंग, प्रभाव, ताप, शब्द, विद्युत), निरपेक्ष(मूल चेष्टा– श्रम, गति, परिणाम)

निरपेक्ष ऊर्जा संपन्नतापूर्वक पदार्थ मे मूल चेष्टा और पदार्थ के बिना निरपेक्ष ऊर्जा का परिचय नही

पदार्थ– ठोस, तरल, विरल; तत्व, यौगिक(रासायनिक और भौतिक परिणाम), मिश्रण(भौतिक परिणाम)

परमाणुओं की जाति, अवस्था एवं मात्रा का निर्णय मध्यांश और आश्रितांश की संख्यापूर्वक

योग– ऐक्य(विलगीकरण संभव नही); सहवास(विलगीकरण संभव)

सहवासपूर्वक प्रेरणा(उन्नति हेतु संवेग)/प्रतिक्रांति; सहवास ही सृष्टि का मूल कारण

पदार्थ– मृदा(उर्वर, अनुर्वर), पाषाण(कठोर, अकठोर), मणि(किरणश्रावी, किरणग्राही), धातु

मूल चेष्टा– परमाण्विक स्थिति मे वातावरण के दवाब से मुक्त चेष्टा

प्रत्येक ग्रह शून्याकर्षण मे स्वतंत्र

प्रकृति – पदार्थ(अविकसित), प्राण(अल्प विकसित), जीव(अर्ध विकसित), मानव(पूर्ण विकसित)

हर अवस्था का अपना रूप, गुण, स्वभाव, धर्म; कोष भेद से प्रकृति का वर्गीकरण

कोष= संपन्नता= 5(प्राणमय, अन्नमय, मनोमय, आनंदमय, विज्ञानमय)

प्राणमय, अन्नमय– पदार्थ

मनोमय– प्राण

आनंदमय– जीव

विज्ञानमय– जागृत मानव

प्रेरणा= ऊर्जा संपन्नता, बल संपन्नता, चुंबकीय बल संपन्नता

रूप– आकार, आयतन, घन

गुण– सम, विषम, मध्यस्थ

स्वभाव– संगठन–विघटन; सारक–मारक; क्रूरता–अक्रूरता (दीनता, हीनता, क्रूरता); धीरता, वीरता, उदारता, दया, कृपा, करूणा

धर्म – अस्तित्व, पुष्टि, आशा, सुख

अनुषंगिता – परिणाम, बीज, वंश, संस्कार

हीनता – विश्वासघात, छल, कपट, दंभ, पाखण्ड

दीनता – अभावजन्य, अक्षमताजन्य

क्रूरता – अपराध(हिंसा), प्रतिकार(प्रतिहिंसा)

जीवन – मनोमय कोष(तृतीय और चतुर्थ परिवेश); आनंदमय कोष(द्वितीय, तृतीय, चतुर्थ परिवेश); विज्ञानमय कोष(अनुभव मूलक विधि से चारो परिवेश)

पदार्थ (अंतिम परिवेश); प्राण (अंतिम + 1); जीवावस्था–जीवन(चतुर्थ पूर्ण, तृतीय आंशिक, द्वितीय अत्यांशिक); ज्ञानावस्था– भ्रमित जीवन(चतुर्थ पूर्ण, तृतीय और द्वितीय आधे से अधिक); जागृत जीवन(सभी परिवेश पूर्ण क्रियाशील)

जीवन मे अन्नमय कोष तृप्त

अणुसमूह+ताप+दाब+किरण/विकिरण के निश्चित अनुपात मे घटना प्रक्रिया पूर्वक गठनपूर्णता

अध्याय 4 मानव सहज प्रयोजन

मानव लक्ष्य– विश्राम

मानव, परिवार, समुदाय, अखण्ड समाज

कार्यक्रम, व्यवहार और उत्पादन समाज में ही

सामान्याकांक्षा– आहार, आवास, अलंकार– उपयोग

महत्वाकांक्षा– दूरगमन, दूरश्रवण, दूरदर्शन– सदुपयोग

मानव समाज– अमानवीय, मानवीय, अतिमानवीय

मानवीय स्वभाव, विषय और दृष्टि को संरक्षण, संवर्द्धन और प्रोत्साहन देने वाली व्यवस्था= मानवीय व्यवस्था

अखण्ड समाज, परिवार मूलक स्वराज्य व्यवस्था, हर मानव सहज प्रमाण परंपरा= अतिमानवीय सामाजिक व्यवस्था

संबंध(प्रत्याशाएँ पूर्व निश्चित) और संपर्क(प्रत्याशाएँ ऐच्छिक रूप मे निहित)– मिलन

कर्तव्य और निष्ठापूर्वक सामाजिकता का निर्वाह; इस हेतु भौतिक और बौद्धिक साधनों का नियोजन

साधन= अर्थ= मन, तन, धन

इनका नियोजन स्वार्थ, परार्थ और परमार्थ भेद से

बौद्धिक प्रयोग और प्रयास पूर्वक बौद्धिक समाधान

भौतिक प्रयोग, प्रयास, उत्पादनपूर्वक भौतिक समृद्धि; इस हेतु प्राकृतिक वैभव का उपयोग और सदुपयोग; इस हेतु अर्थ का नियोजन

मानव का समस्त प्रयास और प्रयोग तृप्ति/सुख हेतु

तृप्ति – ऐंद्रिय(क्षणिक), बौद्धिक(दीर्घ), मूल्यमूलक, लक्ष्य मूलक(नित्य)

इंद्रिय तृप्ति सामयिक प्रक्रिया; हृदय तृप्ति पूर्वक इंद्रिय तृप्ति

लाभ– लघु मूल्य के बदले गुरू मूल्य की प्राप्ति; ऐसा देना अज्ञान, विवशता, स्वेच्छावश

गुरू मूल्य के बदले लघु मूल्य देना– प्रलोभन, दीनता(अक्षमता और अभाववश आवश्यकता पूर्ति हेतु), हीनता, क्रूरतावश

मनुष्येतर सृष्टि में ज्ञान= सामान्य ज्ञान

मानव द्वारा व्यवहृत– विवेक, विज्ञान

मानव एक न्यायिक, सामाजिक इकाई

भ्रमित मानव कर्म करते समय स्वतंत्र; फल भोगते समय परतंत्र; जागृत मानव कर्म करते समय स्वतंत्र; फल भोगते समय स्वतंत्र

कर्मस्वतंत्रतावश मानव को उन्नतावकाश और अवनतावकाश दोनो

जागृति= भ्रम मुक्ति= मोक्ष= सर्वतोमुखी समाधान

मानव संतान मे गलती करने का अधिकार और सही करने का अवसर और साधन

मानव सही मे एक, गलती मे अनेक

मानवीयता के संरक्षण हेतु सामाजिकता(मानवीयतापूर्ण संस्कृति, सभ्यता, विधि, व्यवस्था) का अध्ययन, प्रयोग और पालन

मानवीयता के संरक्षण हेतु संपूर्ण कार्यक्रम= विवेक और विज्ञान पूर्ण विचार, व्यवहार, अध्ययन, अध्यापन, उत्पादन, उपयोग, सदुपयोग, वितरण, प्रचार, विधि, व्यवस्था

उपकार प्रधान सेवा पूर्वक संतुष्टि; प्रतिफल प्रधान सेवा पूर्वक सिर्फ प्रतिफल

प्रयोग और उत्पादन पूर्वक प्राप्त अर्थ के सदुपयोग और सुरक्षा हेतु धर्मनैतिक और राज्यनैतिक व्यवस्था

सृष्टि– जड़, चैतन्य; जड़ ही विकासपूर्वक चैतन्य; गठन साम्यता किंतु कोष भेद पूर्वक क्रिया और आचरण मे भेद;

आचरण– जिस क्रिया से मौलिकता का मूल्यांकन होता है।

मानव मे बौद्धिक पक्ष – आशा, विचार, इच्छा, संकल्प और अनुभव तथा इनसे संबंधित प्रक्रिया

भौतिक पक्ष – शरीर और उसके द्वारा की गई उत्पादन प्रक्रिया

आत्मा में अनुभूति, बुद्धि में बोध, स्वीकृति, आप्लावन, चित्त में आह्लाद, वृत्ति में उत्साह, मन में कौतुहल ही जागृति को प्रमाणित करने की प्रवृत्तियॉ

पदार्थ अवस्था के परमाणु के अंतिम परिवेशीय अंश ही श्रमपूर्वक सक्रिय/अग्रेषण क्रिया मे रत

ईष्ट सेवन का लक्ष्य ईष्ट मे तादात्म्य, तद्रूप, तत्सान्निध्य, तदावलोकन

तत्= जागृति= इष्ट

व्यवहार– सबीजन, निर्बीजन

निर्बीजन व्यवहार मे अमानवीयता से मुक्ति, मानवीयता का पोषण तथा अतिमानवीयतापूर्ण स्थिति का प्रमाण; निर्बीज विचार(विवेक) पूर्वक निर्बीज व्यवहार

अनासक्त (विचार) विचार ही दिव्य मानव की स्वभाव सिद्ध वैचारिक प्रक्रिया

आकृति को रूप, प्रभाव को गुण, वस्तु स्थिति को तत्व

रूप और गुण सापेक्ष, सामयिक तथ्य

जीवन शक्ति का प्रसारण मेधस पर, फलस्वरुप ज्ञानवाही और क्रियावाही प्रक्रियाएॅ

अधिकार– सही मंतव्यानुसार अन्य को गति और कला प्रदान करना; उपयोग, सदुपयोग, पोषण करने की क्षमता, योग्यता और पात्रता होना

अध्ययन– अभ्यासत्रय– अनुभव– प्रमाण

आसक्ति(गलत मान कर करना), प्रसक्ति(सही मान कर करना)

चैतन्य पक्ष की जागृति का कारण= संस्कार

मानव शरीर के परिणाम का कारण= अध्यास, वंशानुक्रम

चतुर्थ तथा तृतीय परिवेश का जागृत क्रियाकलाप= मनोमय कोष

तृतीय तथा द्वितीय परिवेश का जागृत क्रियाकलाप= आनंदमय कोष

द्वितीय तथा प्रथम परिवेश का जागृत क्रियाकलाप= विज्ञानमय कोष

अणुसमूह ताप, दाब, किरण, विकिरण के निश्चित अनुपात मे घटना के रूप और प्रक्रिया के रूप मे गठनपूर्णता

चैतन्य मे जो कुछ भी अध्यास की रेखाये हैं, वे अंकित हैं ही; अतः अग्रिम विकास की चाहना

ऊर्जा के अंतनियोजन(स्वनिरीक्षण, परीक्षणपूर्वक निष्कर्ष निकालना और प्रमाणित करना) पूर्वक जागृति

अध्यास– मानसिक स्वीकृति

मेधस प्राणावस्था की सवोत्कृष्ट रचना

निर्भ्रम संस्कारपूर्वक जड़ पक्ष के अधिमूल्यन से मुक्ति

अपने से जागृत मानव के निर्देश, आदेश और संदेश की ग्रहणशीलता पूर्वक ही जागृति

अपने महत्व को जानने पहचानने पर ही विश्राम की उपलब्धि

अध्ययन वस्तु–

यथार्थता, वास्तविकता, सत्यता

व्यापक मे समाहित संम्पूर्ण एक एक वस्तु

वर्गीकरण – 4 अवस्था, 4 पद

क्रिया – विकासक्रम, विकास, जागृतिक्रम, जागृति

रूप, गुण, स्वभाव, धर्म

तात्रय की दृष्टि, स्वभाव, बिषय, प्रवृत्ति

अध्याय– 5 निर्भ्रमता ही विश्राम

मानव की चाहना– बौद्धिक समाधान, भौतिक समृद्धि

सत्यता का अध्ययन= वस्तु स्थिति का अध्ययन= निर्भ्रमता

अनुभवगामी विधि से सत्यबोध के अनंतर सत्यानुभूति

अनुभवगामी बोध– आत्मा/अनुभव की साक्षी में बुद्धि में होने वाली स्वीकृति (न्याय, धर्म, सत्य) सहज क्रियाकलाप

अनुभवमूलक बोध– अस्तित्व मे अनुभव और उसकी निरंतरता के फलस्वरुप अनुभव सहज प्रमाण

मान्यताएॅ (भ्रम) चित्रण तक सीमित; बुद्धि चुप; अनुभवमूलक विधि से ही बुद्धि जागृत

सत्यबोध अध्ययन सहज अंतिम उपलब्धि तथा अनुभव स्वभाव

परमानंद, आनंद, चिदानंद/संतोष, शांति, सुख

संतुलन मानव में– नैतिक और व्यवहारिक पक्ष का

6 दृष्टि + 5 प्रवृत्ति के अनुरुप व्यक्तित्व(आहार–विहार–व्यवहार)= एकसूत्रता

भौतिक समृद्धि हेतु भौतिकीय अध्ययन + कर्माभ्यास= विज्ञान; फलस्वरुप दिशा निर्धारण

बौद्धिक अध्ययन + कर्माभ्यास= विवेक; फलस्वरुप लक्ष्य निर्धारण

ज्ञानाभूति पूर्वक विश्राम

व्यवसाय, प्रयोग, व्यवहार, उपयोग/सदुपयोग की क्रिया, प्रक्रिया, उपलब्धि, पद्धति प्रधानतः विवेक सम्मत विज्ञान के अध्ययन पर निर्भर

सुरक्षा= यथास्थिति को बनाए रखना

बौद्धिक समाधान हेतु व्यवहारिक सुगमता(न्याय सम्मत नीति संपन्न आचरण), सामाजिकता और मानवीयता से संपन्न अध्ययन की व्यवस्था

जागृत मानव परंपरा मे संस्कृति, सभ्यता, विधि, व्यवस्था में मानवीयता का समावेश; ये परस्पर अन्योन्याश्रित

मानव समाज का लक्ष्य= भ्रम मुक्ति= सुरक्षा कामना सहित 10 सोपानीय व्यवस्था

भय– प्राकृतिक, पाशविक, अमानवीयता

पंचेन्द्रिय की जानकारी को स्थूल समझ; मन, वृत्ति, चित्त और सापेक्ष शक्ति की जानकारी को सूक्ष्म समझ और निरपेक्ष शक्ति एवं उसको अनुभव करने वाली आत्मा एवं बोध करने वाली बुद्धि की समझ को कारणात्मक समझ संज्ञा है ।

क्रियाएँ– रूप और शब्द के भेद से; शब्द= रूप क्रिया और उसमे निहित अर्थ को निर्देशित करना; रूप= रूप, गुण, स्वभाव, धर्म

क्रिया को निर्देशित करने हेतु प्रयुक्त अक्षर समूह को शब्द; शब्द के अर्थ को व्यक्त करने हेतु प्रयुक्त शब्द समूह की परिभाषा; परिभाषा सहज मौलिकता ही भाव

मौलिकता का निर्णय– रूप, गुण, स्वभाव और धर्म के निरीक्षण, परीक्षण तथा सर्वेक्षण से और अध्ययन द्वारा

रूप= आकार, आयतन, घन; गुण= सम, बिषम, मध्यस्थ; स्वभाव= गुण की उपयोगिता– उद्‌भववादी, विभववादी, प्रयलवादी; धर्म= अस्तित्व, पुष्टि, आशा, धर्म

आत्मा की प्रेरणा से संपन्न संकल्प, इच्छा, विचार और आशा= स्व सापेक्ष= स्फुरण

सामाजिक और प्राकृतिक नियमों के अनुसार व्यवहार की पोषणवादी रीति

बौद्धिक और प्राकृतिक नियमो के अनुसार विचार और आचरण की व्यवहार नीति

प्राप्त कर्तव्यो का, सुख के पोषणवादी रीति और नीति का पालन करना ही धर्मनीति

कर्तव्य– परिवार, समाज, व्यवस्था दत्त भेद से तथा निष्ठा, नियम और सत्यतापर्वक पालन

पदार्थ का विकास और उसकी अवस्था उस इकाई की गति, श्रम तथा परस्परता के दबाव पर निर्भर

सुख एक वैचारिक तथ्य; ज्ञानपूर्वक बुद्धि पूर्वक विचार सार्थक

पदार्थ अनादि और ज्ञान व्यापक; सह–अस्तित्व मे अनुभव ही पूर्ण ज्ञान

पदार्थावस्था मे आकर्षण पूर्वक समूह प्रवृत्ति, प्राणावस्था मे समूह के साथ–साथ संपत्तिकरण प्रक्रिया भी परिलक्षित

अध्याय 6 कर्म और फल

कर्ता(विचार पक्ष नियोजन), कार्य(जड़ पक्ष पर योगदान), कारण(विचार, संस्कार, समझदारी, स्पंदन, सह–अस्तित्व), प्रभाव(स्पष्ट प्रेरणा/स्फुरण), फल

कार्य– कर्तव्य पालन हेतु/आवश्यकता की पूर्ति हेतु

कारण– स्फुरण, प्रेरणा;

प्रभाव– सम, विषम, मध्यस्थ

फल– पूर्ण, न्यून

मानव मे अध्यास से वंशानुषंगिक शरीर रचना और रोग

अध्यास – प्राणावस्था मे कार्यरत प्राणकोषाओ मे स्पष्ट; प्राणसूत्रो मे निहित रचना विधि

अध्याय – 7

मानवीय व्यवहार– लौकिक– एषणात्रय(मानव), बिषय चतुष्टय(भ्रमित मानव)

पारलौकिक – आत्मा और सह–अस्तित्व की ओर अभिमुख व्यवहार

लक्ष्य– लोक(परिणामवादी लक्ष्य), लोकेश

यत्न– अंतरंग (मन, वृत्ति, चित्त, बुद्धि), बहिरंग (5 इन्द्रिय)

प्रयास– व्यष्टि, समष्टि

प्रगति– ह्रास, विकास

फल– पूर्ण, न्यून

प्रभाव– सम, विषम, मध्यस्थ

अनुभव– इंद्रिय, इंद्रियातीत

प्रतिभाव– सहज / असहज

प्रवृत्ति– विहित / अविहित

भाव– उच्च / नीच

मनन– स्फुरण, प्रेरणा, क्रांति

संतुलन– संतुलन(श्रेय), असंतुलन(प्रेय)

चितंन– यथार्थ / अयथार्थ;   सत्यबोध / भ्रम(अहंकार)

सत्ता मे सह–अस्तित्व की पहचान सहित अनुभव सहज समझदारी ही सत्यबोध

संवेग का दबाव उसकी गति और पिपासा का निर्धारण इच्छा और प्रयोजन से नियंत्रित; तीव्र संवेग ही क्रिया के रूप मे अवतरित

सम्पर्क और संबंध का प्रयास– जागृति हेतु– सामाजिकता– पुरूषार्थ

निर्वाह हेतु– कर्तव्य पालन पूर्वक वर्तमान संतुलन– कर्तव्य

भोगेच्छा हेतु– इन्द्रिय लिप्सा और शोषण पूर्वक असंतुलन–विवशता

कर्तव्य – संबंधो की पहचान सहित निर्वाह क्रिया, जिससे निष्ठा का बोध

दायित्व – संबंधो की पहचान सहित मूल्यो का निर्वाह सहित मूल्यांकन क्रिया, जिससे तृप्ति का बोध

संवेगपूर्वक ही चयन क्रिया– संग्रहवादी, पोषणवादी, दोहनवादी, त्यागवादी, शोषणवादी

समस्त कर्तव्य संबंध और संपर्क की सीमा तक ही

भ्रम और भय पूर्वक सुख हेतु साधनों का प्रयोग

मानवीयतापूर्ण व्यवहार, व्यवसाय, अध्ययन व नीति पारंगत होने पर ही मानव सुखी

अध्याय– 8 पद–पदातीत(व्यापक)

पद का वर्गीकरण रूप–गुण, स्वभाव–धर्म की अवस्था और अनुपात के अध्ययन से सिद्ध; पद का निर्णय इकाई के गठन, प्रक्रिया और आचरण से

रूप– आकार, आयतन, घन

शब्द– नाद, गति, भाषा, परिभाषा

गुण– उद्भव, विभव, प्रलय

अर्थ– नियम और प्रक्रिया पूर्वक सिद्ध सिद्धि

साम्य सत्ता मे अनुभूति/ज्ञान= पदातीत अर्थ

इंद्रिय– इच्छानुसार द्रवित होने वाले/चेष्टा करने वाले अंग

सीमित अर्थ से सुख/दुःख का मन, वृत्ति में भास, आभास

प्रयास– अपूर्ण(परिणामवादी फल हेतु), पूर्ण(अपरिणामवादी फल हेतु)

पारलौकिक लक्ष्य से मानव जीवन सफल; सुसंस्कृत संस्कार से व्यवहार सुगमता

अध्याय– 9 दर्शन–दृश्य–दृष्टि

दर्शन क्षमता, योग्यता, पात्रता, वातावरण, अध्ययन और पूर्व संस्कारपूर्वक

दर्शन– दृष्टि द्वारा प्राप्त समझ

वातावरण– प्राकृतिक, मानवकृत

अध्ययन– शास्त्र, इतिहास, काव्य

सिद्धांत– नियम और प्रक्रिया फल का संयुक्त प्रमाण

शास्त्र– निर्दिष्ट लक्ष्योन्मुख सिद्धांत प्रक्रिया और नियम तथा वस्तुस्थिति का निर्देशपूर्वक बोध कराने वाले शब्द व्यूह

व्यवहार का नियंत्रण न्याय से, वैचारिक संयमता धर्म से तथा अनुभव मात्र सत्य से संपन्न

विधि– सुखोदय; निषेध– क्लेशोदय

प्रलोभन– अर्थ और काम; कामना– मोक्ष, स्वर्ग; काव्य– स्वीकृत, अनुकृत

बंधन– आशा(संवेदना= सुख), विचार(स्वविचार श्रेष्ठ), इच्छा(चित्रण को चितंन मानना)

लोकासक्ति(जड़ पक्ष) से विषय सुख(क्षणिक); आत्मबोध से सहज सुख की निरंतरता

जिसमें सुख की निरंतरता नहीं है, उसमे सुख पाने का प्रयास= बंधन

जिसमें सुख स्वभाव है, उसका अनुभव= मोक्ष

संपूर्ण सृष्टि= व्यापक, चैतन्य, जड़

प्रकृति= क्रिया= भौतिक, रासायनिक, जीवन

दृष्टि– प्रिय, हित, लाभ, न्याय, धर्म, सत्य

मानवीयता और अतिमानवीयता से समृद्ध होने के लिए मोक्ष और धर्म प्रमाणित होना आवश्यक

धर्म और मोक्ष के संकल्प पूर्वक न्याय, धर्म, सत्य की दृष्टि क्रियाशील

अर्थ और काम के प्रलोभन से प्रिय, हित, लाभ की दृष्टि क्रियाशील

क्षमता द्वारा की गई अभिव्यक्ति= दृष्टि; दृष्टि मे होने वाली प्रतिबिम्बन क्रिया = दर्शन

विषयी, विषय और विषयवस्तु ये तीनो क्रियाएॅ; समस्त क्रियाएँ शून्य मे संरक्षित, नियंत्रित

परस्पर समाधान के अर्थ मे क्रिया और संकेत ग्रहण सहित अनुसरण क्रिया ही एकसूत्रता

लौकिक व्यवहार– स्वार्थ(अर्थ, काम), परार्थ(धर्म, अर्थ), परमार्थ(धर्म, मोक्ष)

पारलौकिक व्यवहार– सबीज(विषय चतुष्टय, पुत्रेषणा, वित्तेषणा), निर्बीज(लोकेषणा, ऐषणामुक्ति / उपकार)

समझदारीपूर्ण विचार= निर्बीज विचार(जो दिव्य मानव कोटि मे प्रमाणित); व्यापक सत्ता मे अनुभूति से भ्रांति का उन्मूलन

व्यष्टि मे पाया जाने वाला अभिमान, अहंकार ही संकीर्णता, क्लेश का मूल कारण

अध्याय– 10 क्लेश मुक्ति

दुःख और भ्रम से मुक्ति

अध्ययन रूपी उपासना से ही समझदारी रूपी इष्ट सानिध्य अध्यापक के रूप मे मिलता है और तदाकार, तद्रूपता के रूप में समझदारी का स्वत्व, स्वतंत्रता होना पाया जाता है।

इष्ट– निर्भ्रमता पूर्वक श्रद्धा, विश्वास सहित श्रेष्ठता का पहचान होना

प्रयोग से व्यवहारिक साधन, व्यवसाय से उपयोगी सामग्री, अभ्यास से कुशलता, पारंगतता की उपलब्धि

असंग्रह– (सद्)व्यय हेतु आय

अकर्तृत्व– अभिमान मुक्त क्रियाकलाप= विधि विहित क्रियाकलाप= भ्रम से निराकर्षण= सम्यक मूल्यांकन

चेष्टा से मुक्ति का प्रयास– अकर्मण्यता(कर्म से मुक्ति का प्रयास), आलस्य(सही मानते हुए, उपायदेयता सिद्ध होते हुए भी नहीं करना), प्रमादात्मक दोष(उपायदेयता सिद्ध होती है, किंतु ज्ञान के अभाव मे वांछित क्रिया के संपन्न नहीं होना)

निराकर्षण– आंशिक, पूर्ण

अंतरंग– चैतन्य पक्ष; बहिरंग– जड़ पक्ष (शरीर)

व्यवहारिक मध्यस्थता न्याय से, वैचारिक मध्यस्थता धर्म से, अनुभव की मध्यस्थता ज्ञान, विवेक, विज्ञान से

आस्वादन क्रिया= सम, विषम विचार, व्यवहार

व्यवहार मे अनुभव तथ्य न्याय, विचार मे अनुभव तथ्य धर्म ही समाधान और आत्मानुभूत तथ्य सह–अस्तित्व

मानव समाज का पोषण एवं संवर्द्धन जीवन मुक्त और भ्रम मुक्त मानव का स्वभाव

पर–वैराग्य– जागृति(पर) के लिए सभी विरोधी (अपमानत्रय) दोषो से मुक्त होना

अध्याय 11 योग

योग– प्राप्त, प्राप्य

प्राप्त– मध्यस्थ अनुभव, विचार, व्यवहार

प्राप्य– एकत्व(सजातीय मिलन), निकटत्व(विजातीय मिलन)

जागृत/पूर्ण विकसित– न्याय एवं धर्म सम्मत विचार और व्यवहार संपन्न तथा सत्यानुभूति प्रमाण सहित

विकसित– न्याय एवं धर्म सम्मत विचार व व्यवहार संपन्न

प्रगति– न्याय सम्मत विचार व व्यवहार संपन्न

ह्रास– अन्याय आसक्त विचार व व्यवहार संपन्न

वैचारिक स्वर्गीयता वैचारिक नियमपूर्वक, व्यवहारिक सुख चरित्र(सामाजिक नियम) पूर्वक

लोकेशानुभव का अवसर आत्मा को, लोकदर्शन का अवसर बुद्धि व चित्त को, तथा न्यायोचित व्यवहार का अवसर वृत्ति व मन को है ।

संशय और विपर्यय (भ्रम) से मुक्त बौद्धिक स्थिति = समाधान;

इच्छापूर्वक किये गये अंतरंग व बहिरंग व्यवहार= आचरण;

सार्वभौमिक सिद्धांत = नियम

अध्याय– 12 लक्षण, लोक, आलोक, लक्ष्य

लक्षण– रूप, गुण, स्वभाव, धर्म

लोक– इच्छा और क्रिया का सम्मलित रूप

आलोक– ज्ञान

अवलोकन– आलोक सहित(बोध पूर्वक) दर्शन

लक्ष्य– भोग(विषय चतुष्टय, पुत्रेषणा, वित्तेषणा), प्राप्य योग(लोकेषणा सहित विभूति, सामर्थ्य द्वारा जनजाति को आप्लावित करना), अनुभव(प्राप्त योगानुभूति ही पूर्ण जागृति) के भेद से

लक्ष्य निर्णय– स्व, पर, परिस्थिति वश

कुटुम्ब– सच्चरित्र, दुष्चरित्र

राष्ट्रीय जीवन– न्यायवादी, अवसरवादी पूर्ण नीति

व्यक्तिगत जीवन– सत्कर्म, दुष्कर्म

मानव लक्ष्य को पहचानने हेतु (प्राप्त) ज्ञान सम्मत विवेक

आवश्यकता से अधिक उत्पादन के रूप मे समृद्धि, व्यक्तित्व के रूप मे चरित्र, प्रमाणिकता और सहमति के रूप मे सामाजिकता, न्याय पालन, प्रबोधन, पोषण से राष्ट्रीयता, विज्ञान और विवेक से प्राप्त मानव लक्ष्य से अंतराष्ट्रीय जीवन का वैभव है।

आवश्यकता– सामान्य आकांक्षा, महत्व आकांक्षा

सामान्याकांक्षा– अपूर्ति से संतोष, पूर्ति से सशंकता, अधिकता से संतुष्टि

महत्वाकांक्षा– अपूर्ति से कौतुहल, पूर्ति से तृप्ति, अधिकता से असंतोष

विज्ञान– भौतिक समृद्धि सहित मानव लक्ष्य की सफलता के लिए दिशा निर्धारण ज्ञान

सह–अस्तित्व मे जागृति रूपी अध्यात्म विज्ञान, बौद्धिक विज्ञान तथा भौतिक विज्ञान के एकसूत्रात्मक अध्ययनपूर्वक रहस्यो का निवारण, फलतः पूर्ण दर्शन

लोक के प्रति अनासक्तिपूर्वक ही ज्ञानानुभव

कारण अनुक्रम से अध्यात्म ज्ञान का, गुण अनुक्रम न्याय से बौद्धिक विज्ञान का और गणितानुक्रम नियम से भौतिक विज्ञान का अनुसंधान, अविष्कार और उपलब्धियाँ सार्थक

गणितानुक्रम नियम से क्रिया, प्रतिक्रिया, परिपाक(फल) का; गुणानुक्रम न्याय से ह्रास और जागृति का; कारणानुक्रम विधि से सापेक्ष और निरपेक्ष शक्ति, उर्जा मे संपृक्त प्रकृति का अध्ययन, आभास व अनुभवपूर्ण

अज्ञान(जैसा है, वैसा नही समझना), मृत्यु(पिण्ड की विघटन क्रिया), अंधकार(प्रकाश के दूसरी ओर की छाया), भ्रम– ये 4 मान्यताएँ विचार में, जिनका अस्तित्व सिद्ध नही, इनके मूल मे अज्ञान

समष्टि की आंशिकता मे व्यष्टि

जागृति का अवसर सर्वमानव के लिए समान, जिनका सदुपयोग/दुरूपयोग वातावरण, अध्ययन और पूर्व संस्कार पर निर्भर

मानवकृत वातावरण= संस्कृति, सभ्यता, विधि, व्यवस्था– बौद्धिक समाधान, भौतिक समृद्धि तथा ज्ञान हेतु

वर्तमान से पूर्व मे की गई क्रिया मात्र का फल परिणाम ही संस्कार है, जो तात्रय की सीमा मे है

अध्ययन – 13 मानवीयता

मानवीयता ही एक मात्र सुख, सद्व्यय ही सुख

परस्परपूरकता और उपयोगिता ही व्यवहार की एकसूत्रता

धर्मपूर्ण विचार तथा न्यायपूर्ण व्यवहार से ही सत्यानुभूति संभव

समस्त क्रिया परस्परपूरकता और उपयोगी

विचार ही सत्यपूर्ण होने पर स्वतंत्र, स्वतंत्र विचार भी परस्परपूरक और उपयोगी

वस्तु का उपयोग व परिणाम(रूपांतरण) निश्चित

उत्पादन(संपादित वस्तु को मनाकार प्रदान करना) और संपादन(प्रकृतिक उपलब्धि) भेद से वस्तुएँ है।

अभिमान– स्व ऐश्वर्य को श्रेष्ठ मानना

भय– प्राण, पद, मान, धन; ये सभी सामाजिक, इन्हें स्थायी समझ लेना ही संकट का कारण

अध्याय– 14 मानव व्यवहार सहज नियम

अध्ययन जड़–चैतन्य और व्यापक में; यह विवेक और विज्ञान विधि से ही संपन्न

विवेकात्मक अध्ययनपूर्वक बोधत्रय; साथ ही मानव और जीवन लक्ष्य स्पष्ट

व्यवहारिक नियम मानवीयता के संरक्षण हेतु

बहिरंग व्यवहार हेतु साधन– प्राकृतिक(खनिज, वनस्पति, मनुष्येतर जीव), सांस्कृतिक (संस्कृति रूप, बल, पद, धन द्वारा प्रस्तुत)

अधिकार– जन्म सिद्ध(संबंध के अर्थ मे), प्रदत्त(व्यवस्था की सीमा मे), समयोचित(संपर्क के अर्थ मे)

जन्म सिद्ध– 7 संबंध के अर्थ मे

प्रदत्त– कुटुम्ब, समाज, व्यवस्थादत्त

समयोचित– समय और समीचीन मिलन के अनुसार

वैज्ञानिक नियमो के अध्ययन और तद्नुसार कर्माभ्यास से भौतिक समृद्धि संभव

विवेकपूर्ण नियमो के अध्ययन और तद्नुसार नियंत्रण से बौद्धिक समाधान संभव

प्राण के विधिवत नियंत्रण से ही स्वस्थ शरीर संभव; जो स्वस्थ व्यवहार हेतु आवश्यक

अन्न से प्राणपोषण, व्यवसाय से समृद्धि, संयम से अपव्यय का निरोध, वैज्ञानिक समझ से भौतिक दर्शन, विवेकात्मक समझ से बौद्धिक दर्शन, व्यवहारिक समझ से समाज दर्शन, अर्थशास्त्र की समझ से व्यवस्था दर्शन तथा पूर्ण समाधान से व्यापकता मे अनुभूति है।

प्राण– एक वायु विशेष, जिससे हृदय क्रिया के लिए प्रेरणा पाता है।

प्राण– बल पोषक; अपान– बल शोषण; व्यान– उपयोगात्मक, उदान– संचालनात्मक, समान– विकासात्मक

अन्न– आहार, औषधि (शारीरिक और मानसिक रोगो के निराकरण हेतु)

प्राप्त कर्तव्य– वांछित, प्रेरित, सूचित

धन समाज की संपत्ति; धन जड़ पक्ष और जड़ पक्ष के लिए; समाधान और अनुभूति चैतन्य की और चैतन्य के लिए ही

गुण– सम, विषय, मध्यस्थ (रजो, तमो, सतोगुण)

सापेक्ष कारण– घटना का पूर्व रूप

काल, विस्तार और रचना भेद की गणना, निर्णय गणित से है।

संपृक्तता मे प्राप्त ऊर्जा (सत्ता)= निरपेक्ष कारण– जिसका उत्पत्ति क्रम का कारण न हो और नित्य स्थिति मे हो

सूक्ष्म गति और क्रिया– गति, कंपन और तरंग

जड़ – पारदर्शक, अपारदर्शक, पारभासक

जागृति की परिपूर्णता ज्ञान की पारदर्शकता पूर्वक

चारो अवस्था मे कार्य–गति नियम (सार्थकता के अर्थ मे)– आकर्षण, विकर्षण, प्रत्याकर्षण, धनाकर्षण, ऋणाकर्षण, शून्याकर्षण

जड़ चैतन्य परमाणुओ में परिवेश में वर्तुलात्मक गति; मध्यांश मे घूर्णन गति

विचार के अभाव मे रति क्रिया सिद्ध नही; योग पूर्वक प्राप्त उभय–सान्निध्य, मध्यस्थ–आकर्षण और प्रत्याकर्षण के प्रबल वेग की रति संज्ञा

जड़ के साथ रति क्रिया क्षणिक और अस्थाई, वैचारिक रति दीर्घकालिक तथा सत्य रति नित्यकालिक, जो केवल अनुभव और अनुभव की निरंतरता

पूर्ण जागृति से ही पूर्ण समझ सहित सही मूल्यांकन

4 विषय और 5 इन्द्रिय के प्रति आसक्ति/अनासक्ति के आधार पर मानव जीवन की जागृत अवस्था का निर्णय

4 विषय हृदय तृप्ति का, 5 संवेदना मन का, तुलन निर्णय वृत्ति का, साक्षात्कार चित्त का, अस्तित्व बोध बुद्धि का और सह–अस्तित्व मे अनुभव आत्मा का स्वत्व है।

प्राण हृदय को, हृदय इंद्रिय को, इंद्रिय व्यवहार(कर्म) और भोग को प्ररित करते है।

शरीर, हृदय और प्राण= स्थूल पिण्ड/शरीर; मन, वृत्ति, चित्त= सूक्ष्म शरीर; बुद्धि और आत्मा= कारण शरीर

स्थूल और सूक्ष्म का योग प्राण के द्वारा; सूक्ष्म और कारण का योग चित्त के द्वारा

संकीर्णता मे प्रयुक्त अर्थ= स्वार्थ; विशालता मे प्रयोजित अर्थ= परार्थ; सार्वभौमिकता के अर्थ मे प्रयुक्त अर्थ= परमार्थ

हृदय तृप्ति के लिए, प्राण बल के लिए, मन सुख के लिए, वृत्ति शांति के लिए, चित्त संतोष के लिए, बुद्धि आनंद के लिए, आत्मा अनुभव के लिए आतुर, कातुर, आकांक्षित और प्रतीक्षित

बुद्धि मे पूर्ण बोध होने के साथ ही आत्मा मे अनुभव पूर्ण होना पाया जाता है।

मन मे पूर्वापरानुषंगी प्रभाव भेद से प्रवृत्तियाँ

विज्ञान और विवेक सम्मत विचार तथा क्रिया का परिपूर्ण ज्ञान ही यथार्थ ज्ञान है

क्रिया के नियम और प्रक्रिया की समझ, विचार के कारण तथा नियम की समझ– परिपूर्ण ज्ञान

पदार्थ, वनस्पति, जीव और मनुष्यों मे पाई जाने वाली घटनाएँ क्रमशः परिणामकृत, ऋतुक्रम, विषयक्रम तथा ईषणाक्रम से ही होती है।

विधिवत लोक सेवन से प्रेय एवं लोकेशानुभूति से श्रेय सिद्धियाँ उपलब्ध

रूप, बल एवं बुद्धि का विकास आहार, व्यवहार और विहार की संयमता पर निर्भर

न्याय से पद, उदारता से धन, दया से बल, सच्चरित्र से रूप तथा विज्ञान और विवेक से बुद्धि, निष्ठा से अध्ययन, कर्तव्य से सेवा, संतोष से तप, स्नेह से लोक, प्रेम से लोकेश, आज्ञापालन से रोगी और बालक की सफलता तथा कल्याण सिद्ध है।

अध्याय– 15 मानव सहज न्याय

मानव जीवन न्याय और अवसर भेद से

जिससे जिसका अस्तित्व/व्यवहार नियंत्रित है, वह उसका आश्रय है।

हर्ष, उत्साह, सह–अस्तित्व, निर्भ्रमता को उत्पन्न करने वाले कार्य एवं विचार= निर्दोष/न्यायवादी विचार

असंतोष, अशांति, दुःख, तृषा, खेद, क्षोभ= समस्या

कारण क्रिया के अनुकूल सूक्ष्म क्रिया, सूक्ष्म क्रिया के अनुकूल स्थूल व्यवहार क्रम से जागृति; फलस्वरूप समृद्धि और समाधान

बुद्धिक्षुब्ध मानव अपने ज्ञान को श्रेष्ठ; चित्तक्षुब्ध मानव अपने तर्क को श्रेष्ठ, वृत्तिक्षुब्ध मानव अपने कार्य को श्रेष्ठ मानता है।

विज्ञानमय कोष के विकसित नही होने के कारण ही भ्रम

बुद्धि से प्राप्त अवधारणाएँ क्रम से विचार और क्रिया मे अभिव्यक्त; क्रिया से प्राप्त विचार पुनः अनुमान सहित अवधारणा(संस्कार) मे स्थित

अवधारणा मे तब तक परिवर्तन, जब तक वह धारणा के अनुरूप न हो जाए

मानव– दिव्य, देव, मानव, पशु, राक्षस

रूप, बल और बुद्धि वैयक्तिक संपत्ति; जन, धन और यश कौटुंबिक और अखण्ड समाज की संपत्ति

लघु मूल्य का गुरू मूल्य की ओर आकृष्ट होना स्वभाविक; इस ओर उन्मुख होने, तद्नुसार प्रयोग, प्रयास और व्यवसाय तथा अध्ययन के लिए उपयुक्त वातावरण, अवसर और साधन सफल समाज मे उपलब्ध

न्याय, विधान, व्यवस्था ज्ञान और नियम के लिए प्रेरणा देने हेतु तथा इसमें निष्ठा उत्पन्न करने हेतु क्रम से व्यवस्थापक, विधायक, विद्वान, विचारक और प्रचारक की उपदेयता अनिवार्य

विचारक एवं विद्वान ही प्रचारक

प्रजा – नियम सहित मानवीयतापूर्ण आचरण का पालन करने वाले प्रत्येक मनुष्य

भ्रांति ही अवसरवादिता मे आसक्ति का कारण

निर्भ्रमता के फलस्वरुप समाधान, मनोबल, सुख, कर्तव्यनिष्ठा, स्नेह, अनुराग, शांति, संतोष, प्रेम, सहजता, सरलता, उत्साह, आह्लाद तथा आनंद सहज उपलब्धि है।

मानव गलती करने का अधिकार और सही करने का अवसर और साधन लेकर जन्मता है।

मानव को न्यायवादी बनाने, न्याय मे निष्ठा उत्पन्न करने, उसे स्वभाववादी बनाने हेतु व्यवस्था और शिक्षा संस्कार का योगदान आवश्यक

न्यायवादी मानवो की परस्परता मे सहज स्वभाव= सामाजिक= मानवीयतापूर्ण समाज

अध्याय– 16 पोषण और शोषण

स्वतंत्रता= स्वयं को वातावरण के सभी आयामो मे संगीतमय रूप मे प्रमाणित करना

इकाई + अनुकूल इकाई= पोषण; इकाई – अनुकूल इकाई= शोषण

सुख की स्थिति मे मानव स्वयं को वातावरण के दबाब से मुक्त अनुभव करता है तथा अन्य का पोषण करने मे भी समर्थ

सुख एक बौद्धिक स्थिति; बौद्धिक समाधान और भौतिक समृद्धि पूर्वक सुख

समाधान के मार्ग मे सबसे बड़ा अवरोध– भय

भय तीन प्रकार से– प्राकृतिक, पाशविक, मानव मे निहित अमानवीयता का

4 प्रकार से मानव भयभीत– पद, यश, धन, मृत्यु; मुक्ति हेतु साधन(मन, तन, धन) का नियोजन

संबंध और संपर्क निर्वाह के लिए आधारभूत प्रेरणा श्रोत– सभ्यता, संस्कृति, व्यवस्था, विधि

धार्मिक नीति मात्र चैतन्य पक्ष तथा उसके संबद्ध व्यवहार तक ही सीमित है।

राज्य नीति= सुरक्षा; अतः भौतिकता से अधिक संबंधित

मानव में पदार्थ के मात्र सदुपयोग तथा उपयोग की क्षमता, योग्यता, पात्रता है।

संबंध की परस्परता मे प्रत्याशाएँ पूर्व निश्चित; संपर्क मे आदान–प्रदान क्रियाएँ ऐच्छिक रूप से अवस्थित

संपूर्ण संपर्क, संबंध के लिए प्रेरणा के स्रोत

संपर्क– प्राकृतिक, मानव

संबंध मे भाव पक्ष विशिष्ट है तथा भौतिक पक्ष गौण है

पोषण युक्त संपर्कात्मक और संबंधात्मक विचार एवं तद्नुसार व्यवहार से ही मानवीयता की स्थापना संभव

पोषण– दायित्व का निर्वाह, स्वीकृति (स्वीकारना), पालन करना

इकाई– गठन, उद्देश्य, आचरण(कार्यक्रम) की विशिष्टता; यथाः– व्यक्ति, परिवार, समाज, व्यवस्था

भूमि एक, राज्य अनेक; मानव जाति एक, कर्म अनेक

मनव धर्म एक, समाधान अनेक; ईश्वर/व्यापक एक, देवता अनेक

मानव जाति सही में एक तथा भ्रमवश गलती में अनेक

धर्मनीति– सुखानुभूति हेतु समस्त संपर्क और संबंध के निर्वाह के लिए समाधान, समृद्धि व सह–अस्तित्व का प्रमाण प्रस्तुत करने का निश्चित कार्यक्रम

आवश्यकता– अर्थ और प्राकृतिक संपदा के सदुपयोग की कामना

लक्ष्य/साध्य– समझ, साधन, अवसर, व्यवस्था उपलब्ध कराना; मानवीयता और अतिमानवीयता के प्रोत्साहन हेतु

साधक– मानव; साधन– मन, तन, धन

साधना– अर्थ सहित मानवीय दृष्टि, विषय और स्वभाव सहित साध्य को पाने हेतु प्रयुक्त क्रियाप्रणाली

साधन की प्रयुक्ति कायिक, वाचिक, मानसिक और कृत, कारित, अनुमोदित भेद से

तीन क्षेत्र में प्रयुक्ति– प्राकृतिक, सांस्कृतिक, बौद्धिक

संबंध– 7

1. माता–पिता और पुत्र–पुत्री संबंध – माता पोषण प्रधान व पिता संरक्षण प्रधान; पुत्र–पुत्री से शिक्षापूर्वक भाषा का परिमार्जन, कृतज्ञता, गौरवता की अपेक्षा और अभ्युदय की कामना
2. पति–पत्नी संबंध– 'एक मन, दो शरीर होकर' व्यवहार करना; दोनों पक्षों द्वारा निर्विरोधपूर्वक अपने संबंध और संपर्क का निर्वाह करना ही अवसर, आवश्यकता और उपलब्धि; मान, सम्मान, प्रतिष्ठा, आदर और यश समान रूप में बंटन; विश्वासपूर्वक सम्मान, स्नेह, प्रेम का निर्वाह; मूल्यांकन नित्य नैमित्यिक
3. गुरू–शिष्य संबंध –शिष्य से बोध की अपेक्षा; गुरू में वात्सल्य का भाव, प्रमाणपूर्वक जीना, जिज्ञासा; गौरव, श्रद्धा, कृतज्ञता मूल्य शिष्य में

4. भाई–बहन संबंध –सौहार्द्र भाव, जागृति के अर्थ में परस्पर आप्लावन; परस्पर मूल्यांकन और सहयोग अनुसरण, अनुकरण, आज्ञापालन, अनुशासन में; विश्वास, सम्मान, स्नेह मूल्य प्रधान, प्रेम मूल्य स्पष्ट होना भावी
5. साथी–सहयोगी संबंध– साथी दायित्व निष्ठा और सहयोगी कर्तव्य निष्ठा पूर्वक परस्पर पूरक; विश्वास, गौरव, सम्मान, स्नेह मूल्यपूर्वक मंगलमैत्री
6. व्यवस्था और समग्र व्यवस्था में भागीदारी का संबंध– व्यवस्था का धारक–वाहक जागृत मानव; व्यवस्था धर्मतंत्र और राज्यतंत्र के रूप में प्रमाणित
   धार्मिक कर्तव्य=सामाजिक दायित्व; प्रमाण–समाधान, समृद्धि, अभय, सहअस्तित्व पूर्वक जीने के अर्थ में –अखण्ड समाज के अर्थ में
7. मित्र संबंध– वैर का अभाव और सर्वतोमुखी समाधान में सहभागिता; अनिष्ट कल्पनाओं का स्थान नहीं; विश्वास, सम्मान, स्नेह मूल्य प्रधान, प्रेम मूल्य भावी

अंतरंग की मान्यताएँ अनुभूति और अभ्यास के लिए प्रेरणा स्रोत और बहिरंग की मान्यताएँ सामाजिक और व्यवसाय के लिए प्रेरणा स्रोत

हर अवस्था का अपना धर्म; मानव धर्म = सुख; सुख की अनुभूति हेतु अनेक प्रणालियाँ; आदेश, संदेश, उपदेश; व्याख्या का अधिकारी– अनुभूत मानव ही

समाज में मानवीयता की स्थापना के लिए संपूर्ण प्रयास सर्वप्रथम कार्य

मानव संबंधात्मक एवं संपर्कात्मक सूत्र–

1. बलवान दयापूर्वक
2. बुद्धिमान विवेक तथा विज्ञानपूर्वक
3. रूपवान सत् चरित्रता पूर्वक
4. पदवान न्याय पूर्वक
5. धनवान उदारता पूर्वक
6. विद्यार्थी निष्ठापूर्वक
7. सहयोगी कर्तव्य पूर्वक
8. साथी दायित्वपूर्वक
9. तपस्वी संतोषपूर्वक
10. लोकसेवक स्नेह पूर्वक
11. सह–अस्तित्व(ईश्वर) में प्रेमपूर्वक मानव सुखी होता है।
12. रोगी तथा बालक के साथ आज्ञापालन के रूप में सुखानुभूतियाँ सिद्ध हुई हैं।

मानव संबंधात्मक एवं संपर्कात्मक अपेक्षा–

1. पुरूष का जीवन यतित्व से सफल है। पुरूष में जागृति को प्रमाणित करना यतित्व है।
2. स्त्री का जीवन सतीत्व से सफल है। स्त्रियों में जागृति का प्रमाणित होना सतीत्व है।
3. माता–पिता का जीवन व्यक्तित्व से
4. पुत्र का जीवन नैतिकता के प्रति निष्ठा से
5. व्यवस्था, न्यायपूर्ण नियम के समर्थन व पालन से
6. प्रजा का जीवन समग्र व्यवस्था में भागीदारी से
7. गुरू का जीवन अनुभव को प्रामाणिकता पूर्वक अध्ययन कराने से
8. शिष्य का जीवन गुरू द्वारा कराये गये अध्ययन के द्वारा अर्थबोध संपन्नता से
9. सहयोगी का जीवन कर्तव्य को निर्वाह करने से
10. साथी का जीवन दायित्वों को निर्वाह करने से
11. भाई या बहन का जीवन एक–दूसरे के अनन्य जागृति की आशा से तथा स्नेह सहित दायित्व वहन करने से
12. मित्र का जीवन परस्पर उदारता पूर्ण, समृद्धि सहित सर्वतोमुखी समाधान को प्रमाणित करने से सफल है।

धर्म नैतिक व्यवस्था का उद्देश्य– मानव अखण्ड समाज के अर्थ में व्यवहार करने में सफल हो जाए

मानव राज्य नीति– अर्थ की सुरक्षा के लिए विधि, व्यवस्था प्रदान करने हेतु निश्चित कार्यक्रम

आवश्यकता– अर्थ और प्राकृतिक संपदा की सुरक्षा की चाहना

लक्ष्य– अखण्ड समाज सार्वभौम व्यवस्था की अक्षुण्णता; अमानवीयता से मानवीयता की ओर प्रगति हेतु मार्ग प्रशस्त करने के लिए साधन, अवसर तथा व्यवस्था की स्थापना और सुरक्षा; जो अतिमानवीयता को प्रोत्साहन देने में समर्थ हो

विधि को पहचानने के 5 मुद्दे– शिक्षा–संस्कार, न्याय–सुरक्षा, उत्पादन–कार्य, विनिमय–कोष, स्वास्थ्य–संयम

शिक्षा–संस्कार– अर्थ–बोध;न्याय–सुरक्षा– अभय/न्याय; उत्पादन–कार्य–समृद्धि; विनिमय–कोष– लाभ–हानि मुक्त श्रम–विनिमय; स्वास्थ्य–संयम– जीवन जागृति को प्रमाणित करने योग्य शरीर

विधि का मूल सूत्र– मानवीयतापूर्ण आचरण

विधि का लक्ष्य– निषेध पर विजय/समाधान, व्यवस्था का लक्ष्य– विधि का संरक्षण और संवर्द्धन

बौद्धिक नियम की अवधारणाएँ ही क्रम से व्यवहार काल में प्राकृतिक और सांस्कृतिक नियमों का अनुसरण करती है, जिससे जागृति प्रमाणित

सदुपयोगी राज्य नीति निर्धारण हेतु विधि (जागृत मानव प्रवृत्ति) और निषेध (भ्रमित मानव प्रवृत्ति)

विधि

बौद्धिक क्षेत्र– कर्तव्यपूर्ण असंग्रह/समृद्धि, स्नेह, विद्या, सरलता, अभय

सांस्कृतिक क्षेत्र– स्वधन, स्वनारी/स्वपुरूष, दयापूर्ण कार्य–व्यवहार

प्राकृतिक क्षेत्र – प्राकृतिक संपदा का उत्पादन के अनुपात में व्यय, उत्पादन में पूरक होने का प्रमाण, आवर्तनशीलता को बनाए रखना

उपरोक्त विधि और निषेध को मूल आधार मानकर राज्य नीति निर्धारित होना स्वाभाविक

राष्ट्रीय स्तर पर राज्य नीति के 6 दृष्टिकोण –

1. राष्ट्रीय सुरक्षा– सह–अस्तित्व सिद्धांत से
2. आर्थिक सुरक्षा– परिवार सहज आवश्यकता से अधिक उत्पादन सिद्धांत से
3. उत्पादन सुरक्षा– प्राकृतिक संतुलन को बनाए रखने के सिद्धांत से
4. विनिमय सुरक्षा– श्रम नियोजन व विनिमय सिद्धांत से
5. विद्याध्ययन संस्कार सुरक्षा– सह–अस्तित्वमूलक मानव केंद्रित चिंतन ज्ञान विधि से
6. नैतिक सुरक्षा– तन, मन, धन रूपी अर्थ का सदुपयोग, सुरक्षा से

मुख्य उत्पादन– कृषि एवं उद्योग

राष्ट्रीय वाणिज्य वितरण विधि से सार्थक; अंतर्राष्ट्रीय वाणिज्य आदान–प्रदान की नीति अपनाने से सफल

शिक्षा नीति का लक्ष्य– मानवीय दृष्टि, प्रवृत्ति और स्वभाव व समझदारी, ईमानदारी, जिम्मेदारी, भागीदारी संपन्न नागरिकों का निर्माण, जिनमें अतिमानवीयता के लिए जिज्ञासा हो

शिक्षा–प्रणाली, अध्यापक, माता–पिता तथा अध्ययन, यह सब एकसूत्रात्मक होने से ही सफल विद्याध्ययन

अध्ययन को सफल बनाने का दायित्व अध्यापक, अध्यापन तथा शिक्षा वस्तु और प्रणाली पर; चारों परस्पर पूरक, पर इनमें शिक्षा वस्तु और प्रणाली का बहुत महत्वपूर्ण स्थान

वर्तमान शिक्षा में समावेश–

विज्ञान के साथ चैतन्य पक्ष का; मनोविज्ञान के साथ संस्कार पक्ष का; अर्थशास्त्र के साथ प्राकृतिक और वैयक्तिक ऐश्वर्य के सदुपयोग और सुरक्षात्मक नीति पक्ष का; समाजशास्त्र के साथ मानवीय संस्कृति और सभ्यता का; राजनीतिशास्त्र के साथ मानवीयता के संरक्षण और संवर्द्धन के नीति पक्ष का; दर्शनशास्त्र के साथ क्रिया पक्ष का; इतिहास और भूगोल के साथ मानव और मानवीयता का; साहित्य के साथ तात्विकता का

अध्याय– 17 रहस्य मुक्ति

रहस्य– समझ संपन्न नहीं हो पाना, समझ को प्रकट न करना/न कर सकना

इकाई का सर्वांगीण दर्शन उसके रूप, गुण, स्वभाव और धर्म से; इनमें रूप, गुण, स्वभाव समझ में आता है और धर्म की मात्र अनुभूति ही संभव है, जो अनुभव प्राप्त इकाई के द्वारा एक प्रक्रियाबद्ध अनुभव के संभावनापूर्ण आदेश, संदेश एवं निर्देश व अध्ययन से संभव

अनुभवमूलक विधि से संज्ञानीयतापूर्वक संवेदनाएँ नियंत्रित

रहस्यता का उन्मूलन चैतन्य पक्ष के जागृति के स्तर पर आधारित

जागृति के स्तर– पूर्ण, अर्द्ध, अल्प, अ– जागृत/चेतन

स्थूल शरीर और मन के बीच आशा; मन और वृत्ति के मध्य में विचार; वृत्ति और चित्त के बीच में इच्छा; चित्त और बुद्धि के मध्य में सकल्प तथा बुद्धि और आत्मा के मध्य में प्रमाण की अपेक्षा; यह आवर्तन क्रिया

जागृतिपूर्वक मन की आशा वृत्ति की अनुरूपता में, वृत्ति के द्वारा विचार चित्त की अनुरूपता में, चित्त की इच्छा बुद्धि के बोधन के अनुरूप तथा बुद्धि आत्मा की अस्तित्वानुभूति अनुभव स्वीकृतिपूर्वक सार्थक

जागृत मानव में स्थूल शरीर के द्वारा मूल्यों का मूल्यांकन के रूप में आस्वादन और चयन के लिए मन में आशा, मन की इस आशा के समर्थन के लिए वृत्ति में विचार, वृत्ति के ऐसे विचार के समर्थन के लिए चित्त में इच्छा, चित्त की ऐसी इच्छा के समर्थन के लिए बुद्धि में संकल्प तथा बुद्धि के ऐसे संकल्प के लिए आत्मा में अनुभव प्रमाण सुलभ

शरीर के लिए मन, मन के लिए वृत्ति, वृत्ति के लिए चित्त, चित्त के लिए बुद्धि तथा बुद्धि के लिए आत्मा, आत्मा के लिए सह–अस्तित्व प्रेरक है।

मन वृत्ति से, वृत्ति चित्त से, चित्त बुद्धि से, बुद्धि आत्मा से आप्लावित; यही जागृति; सभी परिवेश तृप्तिपूर्वक पूर्ण क्रियाशील

चेतनाक्रम से पदार्थावस्था में सुप्त; प्राणावस्था में मूर्च्छित; जीवावस्था में अविकसित; पशुमानव में अल्प जागृत; राक्षस मानव अर्ध जागृत; मानव जागृत; देव, दिव्य मानवपूर्ण जागृत

चेतना सुप्त, जागृत, विकसित नहीं; इनका तात्पर्य इकाई के विकासानुसार चेतना के प्रयोजित, नियोजित और अभिव्यक्त होने से है, जिसका मापदण्ड भी इकाई के विकासानुसार ही

जीवावस्था में बौद्धिक पक्ष अविकसित, मन शरीर द्वारा नियंत्रित तथा वृत्ति और चित्त उपेक्षित

केवल वृत्ति और मन के संयोग की स्थिति में मानव जीवन में स्वप्न का चित्रण कार्य ही संपादित; कार्य–व्यवहार में प्रमाणित न होने वाली कल्पनाएँ ही स्वप्न

आत्मबोध पर्यंत जागृत, स्वप्न और सुषुप्ति अवस्था में कायिक, वाचिक, मानसिक साधनों से संपन्न होने वाले समस्त क्रियाकलाप के मूल में अहंकार/भ्रमित मान्यताएँ;

असत्य कल्पना= अहंकार= अज्ञान

इसी अहंकार को चित्रण में अभिमान, वृत्ति में हठ, मन में आसक्ति और आवेश की संज्ञा

जागृत परंपरा में दो प्रकार की प्रक्रिया

1. अनुकरण, अनुसरण, अध्ययन और प्रमाणीकरण– न्यायपूर्ण व्यवहार का अनुसरण/अनुकरण + समाधानपूर्ण/धर्मपूर्ण विचार में प्रसक्त/प्रवृत्त होना; इन दोनों की दृढ़ता, निष्ठा की अपेक्षा में सत्यता की अनुभूति का अधिकार जागृतिपूर्वक प्राप्त; फलस्वरूप बुद्धि आप्लावित
2. शोध, अनुसंधान और प्रमाणीकरण

स्नेह की प्रतिक्रिया ही सुख तथा न्याय की निर्विरोधिता

मानवीयता के संरक्षणात्मक, परिपालनात्मक और आचरणात्मक नियमों की ही न्याय संज्ञा

बुद्धि जब आत्मा का संकेत ग्रहण करने योग्य विकास को पाती है, तब स्व–बोध होता है; यही आत्मबोध है। आत्मबोध से सत्य–संकल्प; सत्य–संकल्प मात्र सत्यपूर्ण और सत्यपूर्ण आचरण

अपराध के अभाव में दयापूर्ण आशा का प्रत्यावर्तन, अन्याय के अभाव में न्यायपूर्ण विचार का प्रत्यावर्तन, आसक्ति के अभाव में समाधानपूर्ण इच्छा का प्रत्यावर्तन तथा अज्ञान के अभाव में ज्ञानपूर्वक संकल्प का प्रत्यावर्तन

अपराधहीन व्यवहार के लिए व्यवस्था का प्रभाव, अन्यायहीन विचार के लिए अखण्ड समाज का प्रभाव तथा अज्ञानरहित बुद्धि के लिए अंतर्नियामन अथवा ध्यान आवश्यक है; जिससे ही प्रत्यावर्तन क्रिया सफल है।

ध्यान= समझने के लिए मन, बुद्धि को केंद्रित करना और समझने–अनुभव करने के उपरांत प्रमाणित करने के लिए मन, बुद्धि को केंद्रित करना

अर्थ बोध होने के लिए तथा अर्थबोध को प्रमाणित करने के लिए ध्यान होना आवश्यक; यही ध्येय; सर्वमानव ध्याता

पूर्ण जागृति= न्यायपूर्ण व्यवहार, धर्मपूर्ण विचार और सत्यानुभूति परक इच्छा संपन्न हो जाना

न्याय, धर्म, सत्य पूर्वक जीना

परस्परता में व्यवहार में गलती और अपराध को न होने देना

मानव को अध्यात्मिक/व्यापक पक्ष, अधिदैविक/बौद्धिक पक्ष और अधिभौतिक/जड़ पक्ष का दर्शन, अध्ययन व प्रयोग करने का अवसर प्राप्त

मानव लक्ष्य आसक्ति, तकनीक, पांडित्य भेद से; आवश्यकतानुसार मानव द्वारा सदुपयोग/दुरूपयोग

आध्यात्मिक पक्ष में मानवीयतापूर्ण दृष्टि, गुण और विषय पर अधिकार पाने के पश्चात ही देव, दिव्य मानवीयता हेतु शेष प्रयास करने में सार्थक प्रवृत्त

आत्म बोध ही आध्यात्मिक उपलब्धि; सह–अस्तित्व में व्यापक वस्तु और जीवन बोध ही आध्यात्मिक उपलब्धि

अंर्तनियामन प्रक्रिया द्वारा ही आत्मबोध, जो ध्यान देने की चरम उपलब्धि; यही पूर्ण जागृति

आत्मा की ओर बुद्धि का परावर्तन होते ही आत्मबोध तथा आत्मा सह–अस्तित्व में परावर्तित होने पर अनुभव; ब्रह्मानुभूति(व्यापक सत्ता में अनुभूति, यही सह–अस्तित्व में अनुभूति) अर्थात् सत्यानुभूति एक साथ ही प्रभावशील होती है।

मानव अपनी तथा अन्य मानव, देव मानव, जागृत मानव, देवात्मा व दिव्यात्मा की प्रेरणा से अनुग्रह से तथा अनुकंपा से अध्ययनपूर्वक जागृत होना चाहता है, जिससे वह भी देवत्व, दिव्यत्व की उपलब्धि कर सके।

जड़, चैतन्य तथा व्यापक सत्ता के बारे में मूल निदेशक तत्व :–

1. जड़ मरणधर्मा, चैतन्य अमरत्वधर्मा, व्यापक नित्यधर्मा
2. पिंड= स्थूल, परमाणु=सूक्ष्म, आत्मा= कारण, व्यापक= महाकारण

नित्य सह–अस्तित्व के कारण (निरपेक्ष ऊर्जा) पदार्थावस्था इसे पाकर सक्रिय, प्राणावस्था इसमें होने के कारण स्पंदित, जीवावस्था इसमें होने के कारण आशान्वित और ज्ञानावस्था इसमें होने के कारण आशान्वित और संज्ञानित है।

कोषों के विकास भेद से योग्यता भेद; स्वस्वरूप/आत्मा– मन, वृत्ति, चित्त, बुद्धि से श्रेष्ठ क्रिया

ज्ञानानुभूति की योग्यता मानव की जागृति पर; जागृति संस्कारों पर; संस्कारों का विकास वातावरण, अध्ययन और प्रयास पर; वातावरण, अध्ययन और प्रयास तात्रय पर; तात्रय ज्ञानानुभूति की योग्यता पर निर्भर

बुद्धि को आत्मबोध और व्यापकता सहज अनुभूति का अवसर है।

भ्रांत अवस्था में प्रधानतः 6 संवेग– काम, क्रोध, मद, मोह, लोभ, मत्सर; इनके मूल में आवेश; आवेश के मूल में हठ, हठ के मूल में भ्रम, भ्रम के मूल में अहंकार

जागृत जीवन में आवर्तन क्रिया में आत्मसत्ता का बुद्धि में, बुद्धि सत्ता का चित्त में, चित्त सत्ता का वृत्ति में, वृत्ति सत्ता का मन में पूर्णतः अवगाहन; क्रमशः आनंद, संतोष, शांति और सुख प्रमाणित

बुद्धि और आत्मा के मध्य में आत्मा का ही वातावरण, क्योंकि आत्मा मध्यस्थ; आत्माभिमुख बुद्धि आनंद की अनुभूति करती है।

शून्य मात्र नित्य प्रभाव; अनुभव प्रभाव मध्यस्थ होने के कारण दवाब मुक्त

शून्यस्थ इकाई को गत्यवरोध तथा गति के लिए ऊर्जा का अभाव नहीं

बुद्धि के लिए आत्मानुभूति तथा व्यापकता का बोध, चित्त के लिए सत्यबोधपूर्ण बुद्धि का चिंतन, वृत्ति के लिए यथार्थ चिंतन पूर्ण चित्त का तुलन और मन के लिए न्यायपूर्ण विचारों का मनन, आस्वादन ही पूर्ण जागृति है।

साधन का सदुपयोग ही विकास और दुरूपयोग ही ह्रास

विकसित का एकसूत्रवत अनुकरण तथा अनुसरणपूर्वक स्वयंस्फूर्त होना ही और जागृति को प्रमाणित करना ही सर्वमानव का वैभव

व्यापक वस्तु में सह–अस्तित्व रूपी समझ ही अध्यात्म; इसे प्रमाणित करना ही सर्वमानव का सौभाग्य

भौतिकता परिणामवादी, बौद्धिकता अमरत्ववादी, आध्यात्मिकता नित्यवादी

पदार्थ परिणामवादी, प्राण तरंगवादी, मन चयनवादी, वृत्ति तुलनवादी, चित्त चित्रणवादी, बुद्धि बोधवादी, आत्मा अस्तित्व में अनुभववादी तत्व है।

अस्तित्व अपरिवर्तनीय; इसका आत्मा में अनुभव तथा बुद्धि में बोध

सह–अस्तित्व में अनुभव होने की क्रिया आत्मा में प्रमाणित; यही स्वस्वरूप ज्ञान

पूर्णबोध का अवसर इस भूमि पर केवल मानव को; जागृत मानव परंपरा ही सर्वमानव में, से, के लिए सर्वशुभ का स्रोत

सुख की उपलब्धि= रहस्य मुक्ति

स्वस्वरूप की अनुभूति परंपरा सहज योग विधि से सार्थक

योग= मिलन; सार्थक मिलन=जागृत परंपरा में शरीर और जीवन का योग= जागृत मानव के साथ जागृति के लिए मिलन क्रिया संपन्न होना

अध्याय– 18 सुख–शांति–संतोष–आनंद

अनुभूति के लिए योग आवश्यक; योग–प्राप्त, प्राप्य

प्राप्त योगानुभूति के सुयोग्य क्षमता, योग्यता और पात्रता प्राप्त करना ही इकाई की जागृति का चरमोत्कर्ष

अज्ञान, अत्याशा तथा अभाववश अपराध; अविवेकवश ही अपव्यय

अनुभव– पूर्वानुक्रम, परानुक्रम

आस्वादन और अनुभूति के लिए मानव द्वारा सभी पक्षों का अनुसंधान, संधान, प्रयोग, व्यवसाय, अभ्यास, आविष्कार किया गया है।

कामनाजन्य क्षुधा तथा तृषा; राग, द्वेषात्मक आवेशजन्य काम और क्रोध, मन आशित चार विषय तथा लोभ, ये भ्रमित मानव की विवशताएँ

संसार के समस्त क्रियाकलाप सह–अस्तित्व अनुभूति, विकसित के सानिध्य और अविकसित के पूरकता, उपयोग के लिए है।

सह–अस्तित्व में अनुभव सर्वमानव का इष्ट; अनुभव के फलन में सह–अस्तित्व में तद्रुपता, तादात्म्यता होना स्वाभाविक; ऐसे तादात्म्य संपन्न मानव ही देव, दिव्य मानव; ऐसे मानव के तत् सानिध्य और तदावलोकन होना जागृत मानव परंपरा में भावी

तादात्म्यता= जागृत होकर सभी 30 मूल्यों को पहचानना

व्यापकता में अनुभूति में प्रत्यावर्तन से प्राप्त आप्लावन(प्रभाव और प्रवाह) से बुद्धि, चित्त, वृत्ति और मन पर्यंत प्रभावशील; इस आप्लावन को बुद्धि के स्तर पर आनंद की संज्ञा, चित्त के स्तर पर संतोष, वृत्ति के स्तर पर शांति तथा मन के स्तर पर सुख की संज्ञा है; यही अनुभूति ही इकाई का चरमोत्कर्ष

व्यापकता में अनुभूति आत्मा करती है; तभी बुद्धि का प्रत्यावर्तन संभव

मन का प्रत्यावर्तन वृत्ति से, वृत्ति का प्रत्यावर्तन चित्त से, चित्त का प्रत्यावर्तन बुद्धि से, बुद्धि का प्रत्यावर्तन आत्मा से और आत्मा का प्रत्यावर्तन व्यापक सत्ता में है।

प्रत्यावर्तन ही जागृति का कारण

जागृत मानव में मध्यस्थ/न्यायपूर्ण व्यवहार, मध्यस्थ/धर्मपूर्ण विचार, मध्यस्थ/सह–अस्तित्व रूपी परम सत्य में अनुभव

शिक्षण और प्रशिक्षण द्वारा केवल व्यवसाय ज्ञान, जो मात्र भौतिक समृद्धि हेतु सहायक

मानवीयता और अतिमानवीयता का वर्गीकरण और पुष्टि मानव के साथ किये गये व्यवहार से ही सिद्ध, जिसके लिए अध्ययन तथा दीक्षा आवश्यक

दीक्षा–सुनिश्चित व्यवहार पद्धति= व्रत= जागृति की निरंतरता

आहार, विहार, व्यवहार और व्यवस्था में भागीदारी से ही व्यक्तित्व का मूल्यांकन

संवेदन, संवहन, संरक्षण, संबोधन, संवर्तन तथा प्रत्यावर्तन क्रिया चैतन्य पक्ष की विशिष्टता

संवेदन– 10 इंद्रियों का ज्ञान, विकास की प्रवृत्ति

संवहन– पूर्णता के अर्थ में जिज्ञासा वहन

संरक्षण– विकास के लिए मार्ग प्रशस्त करना

संबोधन– यथार्थ बोधन

संवर्तन– परिमार्जन और परिपूर्णता के लिए प्राप्त संकेतों का अनुसरण

प्रत्यावर्तन– जागृति सहज गतिशीलता

संस्कृति– पूर्णता/अखण्ड समाज के अर्थ में कृतियाँ
जागृत मानव की समाज के अर्थ में अभिव्यक्ति

सभ्यता– सार्वभौम व्यवस्था के अर्थ में प्रमाणित होना
मानव की सार्वभौम व्यवस्था के अर्थ में अभिव्यक्ति

सुसंस्कार के लिए वातावरण और अध्ययन ही प्रधान कारण; इसको सुरक्षित और परिमार्जित करने का दायित्व मनीषियों पर; न्यायपूर्ण व्यवहार तथा सामाजिकता की प्रेरणा भी सुसंस्कारों के वर्द्धन में सहायक

न्यायपूर्ण व्यवहार पक्ष, समाधानपूर्ण विचार पक्ष तथा सत्यानुभूतिपूर्ण प्रमाण अनुभव पक्ष को भाषा द्वारा बोधगम्य, ज्ञानगम्य, व्यवहारगम्य बनाने का प्रयास अनुभवशील मानव/सहज वृत्ति संपन्न मानव द्वारा किया जाता है।

न्यायपूर्ण व्यवहार= सत्य सहज भास; समाधानपूर्ण विचार = सत्य सहज आभास; चिंतन=सत्य सहज प्रतीति; ज्ञानानुभूति= सत्य में अनुभूति

ज्ञानानुभूति के लिए सह–अस्तित्व के प्रति निर्भ्रम ज्ञान, अनन्यता, अनुराग तथा प्रेम के योग्यता और पात्रता का होना अनिवार्य है, जो साधक के न्यायपूर्ण व्यवहार, समाधानपूर्ण विचार से अथवा किसी अनुभवपूर्ण मानव के आज्ञापालन मे पूर्ण निष्ठा से जागृति प्रमाणित होती हैं।

अनुभूति की स्थिति को कैवल्य/तादात्म्य अनुभूति की संज्ञा है, जिसमे क्लेष, अमर्ष, हर्ष, बंधन मुक्ति है।

व्यापक रूपी परमात्मा हर इकाई को समान रूप मे प्राप्त; इसमे अनुभूति ही मानव के लिए अनुभूति

प्रेम की निरंतरता से ही मानव जागृति व दया, कृपा, करूणा की संयुक्त अभिव्यक्ति तद्रूप भाव को प्राप्त होकर भ्रम मुक्त हो जाता है।

अज्ञान, आलस्य, अत्याशा, आक्रोश, प्रलोभन, अभाव और रोग पक्ष ही दुख का कारण

ह्रास का कारण– अजागृति, शक्ति का अपव्यय

मूल मे पूर्ण ज्ञान व्यंजना का अधिकार आत्मा मे

भ्रम मुक्ति ही सार्थक

भ्रांति स्थिति से की गई मूल्यांकन क्रिया= आसक्ति

भ्राताभ्रांत स्थिति से की गई मूल्यांकन क्रिया= जागृति

निर्भ्रांत स्थिति से की गई मूल्यांकन क्रिया= यथार्थ

निर्भ्रांत इकाई में न्यायपूर्ण व्यवहार और धर्मपूर्ण विचार स्वभाव के रूप में परिलक्षित

अनुभव के लिए समझदारी, समझदारी के लिए अनुभूति; इच्छा के लिए समझदारी, समझदारी के लिए इच्छा; इच्छा के लिए क्रिया, क्रिया के लिए इच्छा; उपयोग के लिए क्रिया, क्रिया के लिए उपयोग; क्रिया के लिए उत्पादन, उत्पादन के लिए क्रिया व्यस्त है। इस अनुलोम, विलोम पद्धति से अनेकानेक बौद्धिक स्तर

रूप क्रिया की गणना काल, संवेग, वेग, विसर्जन, गुण व स्वभाव के अनुसार सूक्ष्म, स्थूल भेद से हैं; जो मानव की जानकारी/बुद्धि में भाव, इच्छा में प्रतिभाव, विचार में अनुभाव, मन से प्रवृत्तियों के रूप में व्यक्त होती है।

रूप– सुरूप,कुरूप; क्रिया– जड़, चैतन्य; लक्ष्य–लोक, लोकेश; ज्ञान–विषय, निर्विषय; व्यवस्था–कर्म– विधि, निषेध; भाषा– सार्थक, निरर्थक

सहजोन्मुखता में नित्यता का लोकोन्मुखता में अमरत्व का बोध, विषयोन्मुखता में अनित्यता की स्वीकृति

लोकेषणा ही श्रेष्ठ एषणा; स्वयं की जागृति को प्रमाणित करने एवं मानवीय परंपरा को पोषण, संवर्द्धन के लिए जन, बल और धन का नियोजन

यश का तात्पर्य– जागृति की स्वीकृति, सहानुभूति, अनुकरण क्रिया है।

मानवीयता के विरोधी कायिक, वाचिक, मानसिक क्रियाकलाप से मुक्त रहना ही यश

साधन– अंतरंग(5 शक्ति–मन, वृत्ति, चित्त, बुद्धि, आत्मा सहज परावर्तन रूपी शक्तियाँ), बहिरंग

शरीर का साध्य मन, मन का साध्य वृत्ति, वृत्ति का साध्य चित्त, चित्त का साध्य बुद्धि, बुद्धि का साध्य आत्मा और आत्मा का साध्य सह–अस्तित्व

जिसकी जागृति और तृप्ति शेष है, उसे ही शेष जागृति को प्राप्त करने के लिए साधन की आवश्यकता

आत्मा का पूर्ण विकास(ज्ञान की पारदर्शकता) सह–अस्तित्व में की अनुभूति में, बुद्धि का पूर्ण विकास के संकेत बोध की सत्यसाक्षी में कलांकरण योग्य क्षमता से, वृत्ति का पूर्ण विकास चित्त के संकेत ग्रहण अर्थात् धर्मपूर्ण विचार निर्माण योग्यता से तथा मन का पूर्ण विकास वृत्ति का संकेत ग्रहण कर न्यायसम्मत व्यवहार पात्रता अर्जित करने से है।

मन, वृत्ति, चित्त, बुद्धि, आत्मा जीवन में अभिन्न

जागृति की स्थिति में , जीवन परंपरा में प्रमाणित होनेवाली विभूतियाँ/क्रियाएँ– आत्मा में 2, बुद्धि में 4, चित्त में 16, वृत्ति में 36, मन में 64 (स्थिति और गति में)